International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 388-389

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 388-389
www.allresearchjournal.com
Received: 15-11-2015
Accepted: 19-12-2015

डॉ. दीपक भारद्धाज
सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (चित्रकला विभाग) राज. मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

Correspondence
डॉ. दीपक भारद्धाज
सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष (चित्रकला विभाग) राज. मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

आधुनिक कला का विकास दर्शन

डॉ. दीपक भारद्धाज

सार
आधुनिक कलाकारों ने सौन्दर्यशास्त्र, आध्यात्म विज्ञान, मनोविज्ञान का विचार कर जो बहुरंगी सर्जन, कला के मूल तत्वों पर प्रकाश तथा ललित कलाओं की समरूपताओं का जो परिचय कराया वह कला के इतिहास में अपूर्व है। कला मानव के भावात्मक जीवन को प्रकाशित करती हैं। कला के इतिहास में शास्त्राशुद्धता व उत्मुक्तता के स्वतंत्र महत्व का स्थान–2 पर वर्णन किया गया है। कला के इतिहास को कला के रूप में परिवर्तन का इतिहास माना जाता है। इस रूप परिवर्तन के सृजनात्मक कार्य में हुये तादात्म्य से मिलने वाला आनन्द ही कलाकार की श्रेष्ठ सफलता हैं।

कूट शब्दः आधुनिक कला, विकास दर्शन

प्रस्तावना
आधुनिक कला का इतिहास सबसे अधिक व्यापक, उद्धोधक व मनोरंजक है कलाकार केवल सर्जक न रह कर स्वयं स्वतंत्र रूप से विचार करके निर्मिति करने वाला दार्शनिक बन गया। मुद्रण कला के आविष्कार से विविध प्रकार के ललित एवं ज्ञान–सम्पन्न साहित्य का प्रसार बढ़ा।
आधुनिक कलाकारों ने एक तरफा दृष्टिकोण छोड़कर सोन्दर्यशास्त्र, आध्यात्म विज्ञान, मनोविज्ञान, राजनीति, साहित्य, समाजवाद आदि भिन्न विषयों पर विचार करके जो बहुरंगी सर्जन किया, कला के मूलतत्वों पर प्रकाश डाला व भिन्न ललित कलाओं की समरूपताओं का परिचय कराया वह कला के इतिहास में अपूर्व है।
प्रभावकारी कृति बनाने के लिये निम्न मूलतत्वों में सुसंवादित्व प्रस्थापित करना कलाकार का मुख्य ध्येय होता है। मानव शरीर विज्ञान व मनोविज्ञान पर आधारित होने के कारण कला के सभी सर्जन तत्वों (लय, रस, सामंजस्य, रचना, सुस्थापन्न, महत्व, भावोत्पादकता आदि) के नियम पुरातन से लेकर आधुनिक काल की कला तक वही रहे है, इस प्रकार अपरिवर्तनीय मूल तत्वों पर आधारित होते हुऐ प्रत्येक कला शैली का रूप परिवर्तनीय है। प्राचीन हो या आधुनिक कलाकृति की श्रेष्ठता उन्ही मूल तत्वों के समुचित विकास में निर्धारित होती है।
प्रत्येक श्रेष्ठ आधुनिक कलाकार ने पूर्ववर्ती कला से व कभी विदेशी कला से बहुत कुछ अपना कर अपनी कला को मौलिक रूप दिया है प्रभाववाद के विकास में जापानी कला का महत्वपूर्ण योगदान हैं। जापानी छापाचित्रों के समतलत्व, रेखात्मकता, संयोजन, अधूरी मानवाकृतियों के अंकन के तरीकों मे देगा, गोर्ग्वे, वान गो व तुलुज लोत्रेक ने स्पष्ट रूप से अपनाया पिकासो व ब्राक ने आइबीरियन मूर्तियों से प्रेरणा लेकर घनवाद का विकास किया। मातिस व पाल क्ले ने इस्लामी कला कें रंगांकन व आलंकारित्व से प्रभावित थे। चीनी स्याही शैली ने मार्क टोबी व धब्बावादी चित्रकारों को प्रेरित किया। पुर्सॅ रोमन कला को, सेजान पुर्सॅ को व पिकासों सेजान को मार्गदर्शक मान कर आगे बढ़े। अतः मौलिकता भी अध्ययन व बाहरी प्रभाव पर कितनी आधारित है यह समझना आवश्यक है।
इतिहास के अध्ययन से यह सिद्ध होता हैं कि आदिम कला शिकार व मन्त्र तंत्र से संबंधित थी। ग्रीक कला का विषय पौराणिक गाथाएँ था, मध्ययुगीन कला के बायबल, रामायण, महाभारत, बौद्धधर्म व जैन धर्म को चित्रित किया और उसके पश्चात राजाश्रय पर फली–फूली कला ने दरबारी जीवन का चित्रण किया और उसी प्रकार आधुनिक कला समकालीन जीवन व मानसिकता को प्रतिमित् करती हैं। जिस प्रकार मध्ययुगीन कला पर धार्मिक ग्रंथों में उल्लिखित विचारों का प्रभाव था उसी तरह आधुनिक कला पर समकालीन साहित्य द्वारा प्रस्तुत विचारों का प्रभाव है प्राचीन धार्मिक या दरबारी कला से आधुनिक कला की जो प्रमुख भिन्नता है वह है उसका विखंडित रूप। डार्विन का उत्क्रांतिवादी दर्शन, मनोविश्लेषण व वैज्ञानिक विकास ने कलाकारों को भिन्न दिशाओं में निर्दिष्ट किया।

वास्तव में विकास की कल्पना विज्ञान व गणित जैसे विषयों को जिस तरह से लागू की जाती है वैसे कला को लागू नहीं की जा सकती कला मानव के भावात्मक जीवन को प्रकाशित करती है। उसमें आदिमकाल से अब तक कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

यदि वास्तविक रूप को चित्रित करना है तो काल्पनिक रंगसंगति व विकृतिकरण का प्रयोग नहीं किया जा सकता है और भावनाओं की तीव्रता को दर्शाना है तो वास्तविक रूप में परिवर्तन करना पड़ता है।

विश्व की उत्पत्ति व निरन्तरता द्वैत पर आधारित है व यह मूलभूत सिद्धांत केवल दर्शनशास्त्र की निष्पति नहीं है। कला व विज्ञान के सैद्धांतिक अध्ययन में भी द्वैत की सर्वव्यापक संचालन शक्ति का साक्षात्कार होता है। आधुनिक कला का इतिहास इस द्वंद्वात्मकता से परिपूर्ण है। कला के इतिहास में शास्त्रशुद्धता व उनमुक्तता के स्वतंत्र महत्व का स्थान–2 पर वर्णन किया है। शास्त्रीय कला, नवशास्त्रीयतावाद, नव लचीलवाद व रचनावाद में शास्त्रशुद्धता पर बल दिया है तो बारोक कला, रोमांसवाद व वस्तुनिरपेक्ष अभिव्यंजनावाद में उन्मुक्तता कलानिर्मिति का प्रमुख आधारतत्व माना गया है कला का इतिहास इन विधि मतो के संघर्ष से भरा है। साधना से शास्त्र पर प्रभुत्व प्राप्त करके कलाकृति को रूप दिया जा सकता है। साधना से शास्त्र पर प्रभुत्व प्राप्त करके कलाकृति को रूप दिया जा सकता है किन्तु उसमें सजीवता नहीं आती जब तक कलाकार तन्मय होकर अपनी भाव संवेदनाओं से उसको अनुप्राणित नहीं करता। दूसरी और जिसको उन्मुक्त चित्रण कहते हैं वह कोई निरकुंश स्वच्छंद कार्य पद्धति नहीं होती चित्र में कला के सर्जन तत्वों में सामंजस्य बिठाने के लिये कुछ लिखित व उल्लिखित नियमों का पालन करना पडता है। यह कला का अन्तर्गत अनुशासन है, ऐसा कोई कलाकार नही हुआ जिसने कठोर साधना से कला के इन अन्तर्गत नियमों को आत्मसात नहीं किया चीनी सुमि शैली की चित्रकला व पौलाक का उन्मुक्त चित्रण एकता अवस्था में ही किया जा सकता है व ऐसी एकाग्र अवस्था प्राप्त करने से पहले इन शैलियों के कलाकारों ने कितनी साधना की यह सर्व विदित है। अतः शास्त्रशुद्धता व उन्मुक्तता कोई विरोधी विचार नहीं है।

शास्त्रशुद्धता व उन्मुक्तता का द्वंद्व आध्यात्म विद्या में चर्चित ज्ञानयोग व भक्तियोग के सदृश है। ज्ञान का परिणाम भक्ति मे होता है व भक्ति से ज्ञान की प्राप्ति होती हैं। और एक द्वंद्व यह है कि कला में कलाकार अपने आन्तरिक जीवन को महत्व दे या बाहरी दृश्य जगत को–यानि कल्पना और यथार्थ मे से किसको अधिक महत्व दे। मुंख, क्ले, गोग्वॅ आदि कलाकारों की कला में उतनी आन्तरिक खलबली का दर्शन है जबकि पिकासो, ब्राक, मातिस व यथार्थवादी कलाकारों की कला में जड़ सौंदर्य का दर्शन है। इसी प्रकार स्त्री सौंदर्य के भावात्मक या काल्पनिक पक्ष को आदि हम छोड देते हैं तो उसके सौंदर्य में और कठपुतली के सौंदर्य में क्या अन्तर है? बाहरी सौंदर्य भी व्यक्ति की भावना व कल्पना पर निर्भर हैं यह कलाकार की संवेदनशीलता की दिशा, व्यक्तित्व व परिस्थिति पर निर्भर करता हैं। एक और मनुष्य का आन्तरिक जीवन बाहरी जगत् के परिणाम से निष्प्राण होता है तो दूसरी ओर मनुष्य अपनी मनोवृति के अनुसार बाहरी जगत को ग्रहण कर लेता है दृष्टि व सृष्टि का विभाजन नहीं किया जा सकता ''सृष्टि मेरी कल्पना है।'' यह शोपेकहौर का सिद्धांत है व उसका दार्शनिको ने व मनोविज्ञान ने समर्थन किया है। मनुष्य की कल्पना परोक्ष रूप से वास्तविकता से जुडी रहती है। भारतीय दर्शन में इसलिये लिखा है कि ''संसार एक माया है।''

वस्तुनिष्ठ व आत्मनिष्ठ का द्वन्द्व भी उपयुक्त द्वंद्वों के समान भ्रांतिपूर्ण है। वास्तव में आत्मनिष्ठा व वस्तुत निष्ठा का विभाजन विचारों को शब्दों में व्यक्त करने की या संप्रेषण की सुविधा हेतु किया जाता हैं सत्य और सौंदर्य को शब्दबद्ध नहीं किया जा सकता है। वे शब्दों के पीछे अदृश्य रहते हैं। इसीलिये तो कहा गया है कि शब्दों का भावार्थ समझ लो और शब्दों को भूल जाओं। 'नेति–नेति' का निष्कर्ष यही है। और जो शब्द की स्थिति है वही चित्र की भी।

सामाजिक जीवन का विचार व व्यक्तिगत विकास भी एक ही सिक्के के वे पहलू हैं। सामाजिक जीवन से व्यक्ति का विकास होता है। व व्यक्तिगत विकास से सामाजिक जीवन का कला में रूप या सौंदर्य रचना व भावनाओं की अभिव्यक्ति का पृथक विचार भी संप्रेषण की सुविधा के लिये किया जाता हैं। वस्तुनिरपेक्ष आकारों के प्रखरता, कोमलता गतित्व, स्थायित्व, वैमन्स्य वगैरह गुण होते हैं। जो साहचर्य से दर्शक के मन में भावोत्पादन करते है। वस्तु सजीव हो या निर्जीव उसके रूप का भावनात्मक पक्ष होता है। इसलिये भारतीय दर्शन में दोनों को समान रूप से अज्ञात शक्ति का निवास माना जाता है। जिन निर्जीव साधनों (तूलिका, रंग, पट आदि) की सहायता से कला निर्मिति की जाती है। वे भी अपने आन्तरिक गुणों से कलाकृति में जान डालते हैं जितना कि कलाकार अपनी भावनाओं, विचारों व कौशल से।

कला के इतिहास को कला के रूप में परिवर्तन का इतिहास माना जाता है। इस रूप परिवर्तन के सर्जनात्मक कार्य में हुए तादात्म्य से मिलने वाला आनन्द ही कलाकार की सच्ची सफलता है व उसकी अन्य उपलब्धियों का अर्थ केवल दूसरों को प्रेरित करने के लिये होता है। अतः कलाकार को मिलने वाले आत्मिक आनन्द के अलावा सफलता का मापदण्ड एक ही रह जाता है जो है कलाकृति का सामाजिक महत्व। जीवन के सत्यम् शिवम् सुन्दरम् अन्त स्वरूप को साधना से अनुभव करके उसे कृतार्थभाव से कलाकृति के रूप में श्रद्धांजलि अर्पित करना यही कला का अर्थ है।

संदर्भ सूची

1. पृष्ठ–44, सोन्दर्य शास्त्र (तृ.सं.) लेखक डॉ. ममता चतुर्वेदी, प्रकाशन राज. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर– 2006
2. पृष्ठ 68, कला कोष (द्वि.स.) लेखक र.बि. सांखलकर, प्रकाशन राज. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर–2004
3. पृष्ठ 118, कला के अन्तःदर्शन, (द्वि.सं.) लेखक र.वि. सांखलकर, प्रकाशन, राज. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर–2008
4. पृष्ठ 16, मोनोग्राफ– लेखक– हेमन्त शेष, प्रकाशन– राजस्थान ललित कला आदकमी, जयपुर– 1984